Shruti laya

A Bunch of Research Papers

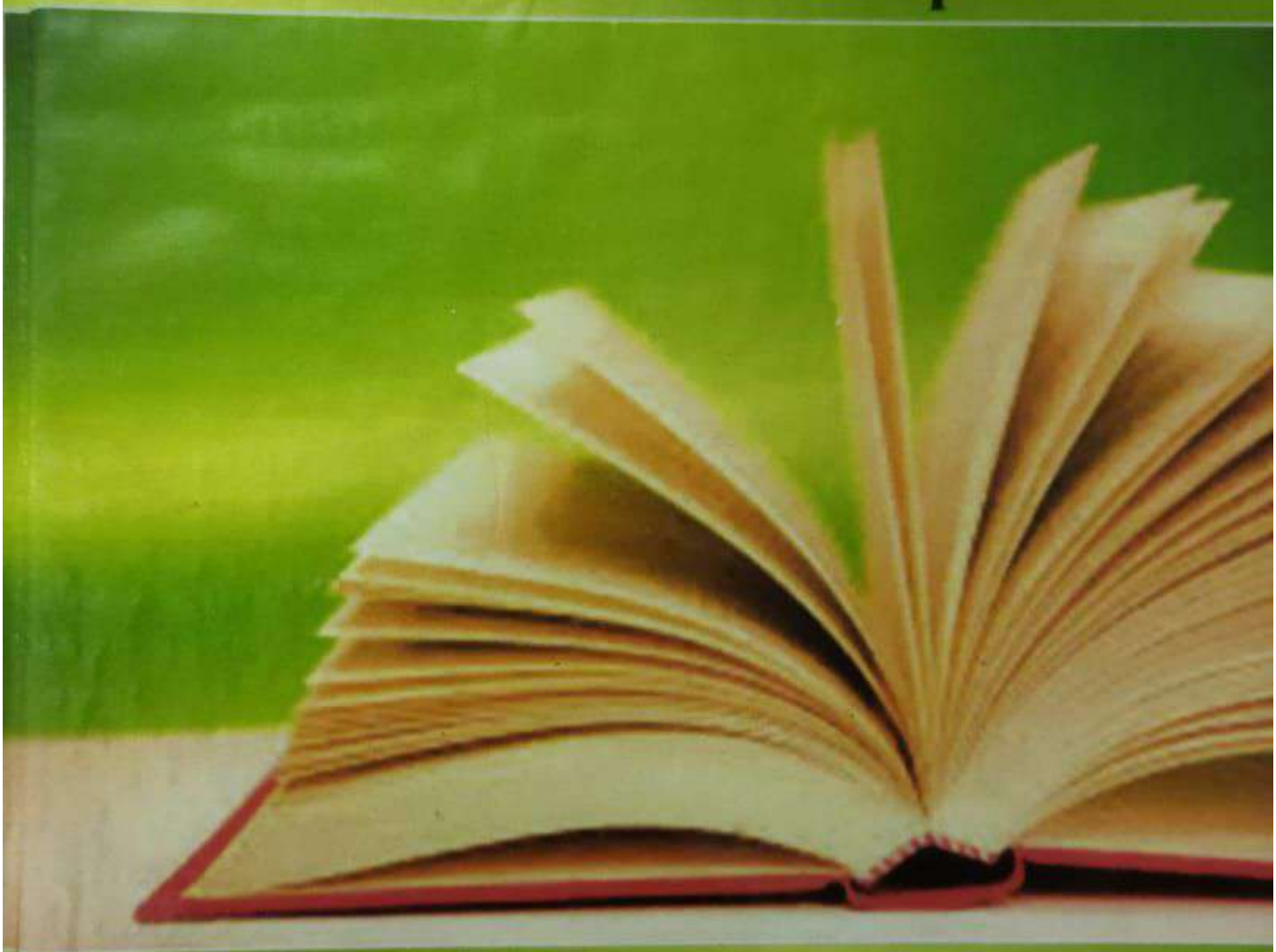

Dr. K SASHI KUMAR

KALA PRAKASHAN

B. 33/33 A-1, New Saket Colony
B.H.U., Varanasi-221005

ISBN - 978-93-85309-07-6

Price Rs. : 400.00

CONTENT

Message		iii
Message		iv
Acknowledgement		v
Preface		vi
MAHABHARATHA CHOODAMANI	... ...	9
Dr. M.A.Bhageerathi		
Kalapramana in Manodharma Sangeeta of Carnatic Music	... ...	16
Dr. Radha Sarangapani		
SARASWATIVEENA	... ...	22
Dr. Shanti Mahesh		
NILOTHPALAMBA VIBHAKTI KRITIS OF SRI MUDDUSVAMI DIKSHITAR	... ...	29
Harini Srivatsa		
The impact of the 72 Melakarta-s in South Indian Classical Music	... ...	33
Dr. B.Balasubramanian		
SREE KRISHNA LEELA TARANGINI- A DANCE DRAMA IN SANSKRIT	... ...	38
Dr.T.V.Manikandan		
The Mridangam Maestro Yella Somanna	... ...	43
Dr.B.Satyavara Prasad		
The Biography of Sangeetha Kalanidhi Sri B Rajam Iyer	... ...	47
Sitha Lakshmi		
Music Education in Mauritius	... ...	51
Rajendra Kumar Deerpaul		
The Relationship of India and Thailand in the contest of Thai classical dance	... ...	58
Dr. Naphatsanan Junnaket		
Caste -Musicians in Central Nepal	... ...	63
Kumar Neupane		
A Short Note on Indian Background of Sinhala Song	... ...	67
Priyantha Tilakasiri		

The Pulluvan Pattu of Kerala 73
Pushpavanam Kuppusamy

रामायण, महाभारत एवं पुराणों में उपलब्ध वीणाएँ 76
प्रतिभा सिंह

प्राचीन काल में नृत्य *(आदिकाल से भरत काल तक)* 79
अलका गिरि

गीतक : एक परिचय 85
ज्योति सिंह

ध्रुपद में लय तथा ताल का महत्व 88
आनन्द कुमार मिश्र

विभिन्न कालों में उत्तर भारतीय शास्त्रीय संगीत में राग वर्गीकरण के प्रमुख आधार 91
श्वेता केशरी

नृत्यकला में निहित आंगिक अभिनय 97
कृतिका जायसवाल

उपशास्त्रीय गायन के साथ तबला संगति : एक पुनरावलोकन 101
डॉ0 विवेक कुमार जैन

गजल और अमीर खुसरो 110
मीनाक्षी तिवारी

आध्यात्म का आधार : कीर्तन 112
अंकित पारिख

नृत्य और आध्यात्म 115
रंजना उपाध्याय

वर्तमान समय में लोकगीतों का बदलता स्वरूप 119
ऋचा वर्मा

आहार्य अभिनय : मुखौटा (छाउ नृत्य के संदर्भ में) 122
दिव्या श्रीवास्तवा

कोसी की लुप्त होती लोक गायन परम्परा 126
प्रिया लक्ष्मी

List of Authors 130

लेखक/लेखिका परिचय 133

प्राचीन काल में नृत्य

(आदिकाल से भरत काल तक)

अलका गिरि

भारत एक धर्म प्रधान देश है। भारतीय विचारधारा सदैव आदर्श की भावभूमि पर प्रवाहित होती रही है जिसके मूल में लोककल्याण की भावना रही है। धर्म एवं नृत्य का गहरा सम्बन्ध है। सभी नृत्यों पर धर्म का प्रभाव दिखता है तथा अनेक धार्मिक ग्रन्थों में नृत्य का उल्लेख प्राप्त होता है। जहाँ जीने की उमंग है वहीं नृत्य है। नृत्य भावों को व्यक्त करने की सौन्दर्यमयी भाषा है, हर्ष ,शोकादि भावों की उत्पत्ति मानव जाति के जन्म के साथ ही मानी जाती है अतः नृत्य का इतिहास भी मानव इतिहास जितना ही प्राचीन माना जाता है। सभ्यता के विकास में नृत्य का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। नाट्य का उपलब्ध प्राचीनतम लक्षण–ग्रंथ भरतमुनि कृत नाट्यशास्त्र है जिसमें नाट्य की आनुषांगिक कला के रुप में नृत्य का विवरण प्राप्त होता है। नृत्य का उल्लेख वेदों में मिलता है, प्रागैतिहासिक काल में भी नृत्य का अस्तित्व था। इस काल में मानव जंगलों में स्वतंत्र विचरण करता था। धीरे–धीरे उसने समूह में पानी के स्रोतों और शिकार बहुल क्षेत्र में टिक कर रहना आरम्भ किया उस समय उसकी सर्वप्रथम समस्या भोजन की होती थी, जिसकी पूर्ति के बाद वह हर्षोल्लास के साथ उछल कूद कर आग के चारों ओर नृत्य किया करता था। ये मानव विपदाओं से भयभीत हो जाते थे जिनके निराकरण हेतु इन्होंने किसी अदृश्य दैविक शक्ति का अनुमान लगाया होगा तथा उसे प्रसन्न करने हेतु अनेकों उपायों का सहारा लिया इन उपायों में से मानव ने नृत्य को अराधना का प्रमुख साधन बनाया।

इतिहास की दृष्टि में सबसे पहले उपलब्ध साक्ष्य गुफाओं में प्राप्त आदिमानव के उकेरे चित्रों तथा हड़प्पा और मोहनजोदड़ों की खुदाइयों में प्राप्त मूर्तियां है, जिनमें एक कांसे की बनी तन्वंगी की मूर्ति है, जिसकी समीक्षा करने वालें विद्वानों ने यह सिद्ध किया है कि यह नृत्य की भावभंगिमा से युक्त है। उत्खनन से प्राप्त इस नृत्यांगना की मूर्ति भारतीय नृत्य कला के इतिहास में प्रथम मूल्यवान उपलब्धि है, जो आज भी दिल्ली के राष्ट्रीय संग्रहालय में रखी हुई है।

हड़प्पा की खुदाई में भी एक काले पत्थर की मूर्ति प्राप्त हुई है जो पुरातत्ववेत्ता मार्शल के अनुसार नर्तकी की है।

प्रत्येक युग में नृत्य मानव की भावनाओं की अभिव्यक्ति का माध्यम रहा है अतः स्वाभाविक रूप से नृत्य का वर्णन विभिन्न धार्मिक ग्रन्थों यथा– वेदों,पुराणों, रामायण, एवं महाभारत आदि में प्राप्त होता है।

वैदिक काल में नृत्य–

सिन्धुघाटी की सभ्यता के पश्चात नृत्यकाल के इतिहास में वैदिक काल का प्रवेश होता है। वेद हमारी सभी कलात्मक विरासतों के मूल ग्रंथ माने जाते हैं। सबसे पहले ऋग्वेद फिर क्रमशः यर्जुवेद, अथर्ववेद और सामवेद का क्रम मान्य है । ऋग्वेद संसार के प्राचीनतम ग्रंथों में से एक है और इसमें नृत्य संबंधी सामग्री प्रचुर मात्रा में दृष्टिगोचर होती है। ऋग्वेद के निम्नलिखित श्लोकों में इन्द्र की महिमा का गान करते हुए उन्हें प्राणियों को नचाने वाला कहा है।

इन्द्र यथा ह्यस्ति तेऽपरीतं नृतो शवः तथा ।
नह्यंगं नृतो त्वदन्यं विन्दामि राधसे।।

(ऋ.,मण्डल–8,सूक्त–24,मंत्र–9)

अर्थात–इन्द्र तुम बहुतों द्वारा आहूत तथा सबको नचाने वाले हो। इससे स्पष्ट होता है कि तत्कालीन समाज में नृत्यकला का प्रचार–प्रसार था। इस युग में नृत्य के साथ निम्नलिखित वाद्यों का प्रयोग होता था।

महषे वीणावादं क्रोशाय तूण बहम वरास्यपराय शड्खध्मं।

(शुक्ल संहिता 30/19)

अर्थात–नृत्य के साथ वीणावादक ,मृदंगवादक एवं वंशीवादक को संगत करनी चाहिये तथा ताल बजाने वाले को बैठना चाहिये।

ऋग्वेद की तरह यजुर्वेद में भी नृत्य संबंधी सामग्री प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है। यर्जुवेद के एक मंत्र से यह पता चलता है कि वैदिक युग में नृत्य करने वाले को सूत कहा जाता था और गाने वाले को शैलूष कहते थें।

नृत्ताय सूतं गीताय शैलूषं।

(शुक्ल संहिता 30/6)

इन लोगों का एक समुदाय स्थापित हो चुका था। ये लोग गा बजाकर और नाच कर अपना भरण–पोषण किया करते थे। समाज में नृत्य–गान की शिक्षा का कार्य भी यही सूत व शैलूष ही किया करते थें क्योंकि इस युग में देवी–देवताओं,

स्त्री– पुरूषों तथा सभी वर्गों में नृत्य का प्रचलन था। सामवेद की रचना ऋग्वेद के पाठ्य अंशो को गाने के लिये की गई अतः यह वेद गान से संबंधित है इसलिये इसमें नृत्य संबंधी सामग्री नहीं मिलती है। नाट्य के चतुर्थ अंग गीत को नाट्य वेद के निर्माता परम पिता ब्रह्मा ने सामवेद से ही ग्रहण किया है।

नृत्यकला के विकास में अन्य वेदों की तरह अथर्ववेद' का भी महत्वपूर्ण स्थान है। उसके अध्ययन में नृत्य संबंधी सामग्री प्रचुरता से मिलती है। इसमें नृत्यकला का उत्कृष्ट रूप देखने को मिलता है। अथर्ववेद के मंत्रों में गायन–वादन का एक साथ उल्लेख देखने को मिलता है।

यस्यां गायन्ति नृत्यंति भूम्यां मर्त्याव्यैलवाः''
युध्यन्ते यस्मान्दो यस्यां वदति दुन्दुभिः।

(अथर्ववेद,भूमिसूक्त,12/1/41)

अर्थात–जिस भूमि में आनंद के बाजे बज रहे है ,जहां लोग प्रसन्नता से नाचते गाते हैं ,और वीर लोग उत्साह से अपने राष्ट्र की रक्षा में तत्पर हैं।

नृत्य को उस युग में व्यायाम के रूप में माना गया था। शरीर को निरोग रखने के लिये नृत्यकला का प्रयोग किया जाता था। यह केवल 'नृत्त' ही था, जिसका प्रयोग समाज में केवल आनंद के अवसरों पर किया जाता था। उपर्युक्त कथन से प्रमाणित होता है कि तांडव और लास्य के बीज वैदिक काल में थे। यह कहना गलत नही होगा कि वैदिक काल में नाट्य–नृत्य तथा तांडव–लास्य का बीजारोपण हो चुका था।

पुराणों में नृत्य :–

हरिवंश पुराण–जैन धर्म से संबंधित इस पुराण में गुरु अष्टनेमि की लीलाओं एवं उनके समय की संस्कृति का चित्रण है। प्रस्तुत हरिवशं पुराण के रचयिता ने अपना परिचय भली प्रकार से देते हुए यह कृति शक संवत् 705 में समाप्त की थी। इसमें नृत्य संबंधी घटनाओं का उल्लेख है। भगवान नेमिनाथ के जन्म के समय के कलापूर्ण नृत्य व गायन के समारोहों का वर्णन इसमें मिलता है। हरिवंश पुराण में नाट्य कला का भी उल्लेख मिलता है।

श्रीमदभागवत महापुराण–इसमें अनेक स्थानों पर नृत्त, नृत्य का उल्लेख पाया गया है साथ ही संगीत वाद्यों का और आहार्य , अभिनय एवं नाट्य का भी उदाहरण मिलता है।

समुद्र–मंथन के समय जब शोभा की मूर्ति लक्ष्मी स्वयं प्रकट हुईं तब उस समय गंधर्वों ने मंगलमयी संगीत छेड़ा नर्तकियाँ नृत्य कर गाने लगीं और

शंख–प्रहर मृदंग आदि बजने लगे। कृष्ण के विवरणों में तो राधा कृष्ण का कोई मिलन नृत्य– संगीत के बिना पूर्ण ही नहीं होता। भगवान श्रीकृष्ण की प्रेयसी और सेविकाएं गोपियां एक दूसरे की बाँह में बाँह डाले यमुना के पुलीन तट पर खड़ी है और कृष्ण आकर रासलीला प्रारम्भ करते हैं। रास 'कथक' नृत्य का प्रारंभिक नृत्य है। उस युग में नृत्य, गायन एवं वादन विधाएँ शिक्षा के आवश्यक अंग थे तथा गुरूकुल में इनकी विधिवत शिक्षा दी जाती थी।

शिव पुराणः– शिव पुराण में भी नृत्य का उल्लेख पाया गया है। इसी प्रकार तेजस्वती तेजों में, अग्रणी कांति धारण करने वाले शिव, सब पर शासन करने वाले, सबके जनक, सतत नृत्य करने वाले, नृत्य को प्रिय मानने वाले हैं। इन्हें नृत्य सम्राट "नटराज" भी कहा जाता है

कूर्म पुराणः– कूर्म पुराण में भी नृत्य का उल्लेख मिलता है। जैसे 'गंधर्व,किन्नर, मुनि और सिद्ध, स्तुति के प्रयोजन से नाचने लगे। अप्सराएँ मोहक नृत्य करने लगीं इत्यादि।

रामायण काल में नृत्य :

रामायण में भी नृत्य का उल्लेख मिलता है।नृत्य सामाजिक जीवन का अभिन्न अंग था एवं यह उच्च कोटि की कला थी जो कि देवी–देवताओं द्वारा अधिष्ठित ,ऋषि मुनियों द्वारा प्रशिक्षित एवं राजाओं – महाराजाओं द्वारा प्रतिष्ठित थी। रामायण में अप्सरा शब्द का प्रयोग मिलता है जो कि नृत्य निपुण होती थीं, शिवभक्त रावण भी एक अच्छा नर्तक था एवं वह नृत्यांजलि के माध्यम से शिव की स्तुति करता था, ऐसा उल्लेख मिलता है। इसके अतिरिक्त भगवान राम के जन्मोत्सव, विवाहोत्सव, राज्याभिषेक , विजयोत्सव आदि अवसरों पर नृत्य समारोहों का विवरण प्राप्त होता है। वाल्मीकि रामायण में उल्लेख प्राप्त होता है कि राम के जन्म के समय नट– नर्तकों की भीड़ राजमार्ग पर लगी हुई थी।

रथ्याश्च जनसवाधाः नटनर्तक संकुलः।

(वाल्मीकि रामायण 1/18/18)

रामायण के एक प्रसंग में लिखा है कि अप्सराएँ नृत्यगान विद्या में निपुण हुआ करती थीं, इसमें अप्सराओं के गुरु तुम्बुरू का भी उल्लेख मिलता है। –

नृत्यदिभरप्सरोभिश्च गन्धर्वेश्च महात्मभिः।

(वाल्मीकि रामायण 4/24/34)

महाभारत में नृत्य :

महाभारत में कई स्थानों पर नृत्य का उल्लेख प्राप्त होता है तत्कालीन समाज में नृत्य जीवन का अभिन्न अंग बन चुका था, विभिन्न उत्सवों जैसे–खाण्डव दाह में कृष्ण, अर्जुन हेतु जलविहार के साथ नृत्य का भी आयोजन का विवरण प्राप्त होता है इसके अतिरिक्त नृत्य में निपुण कलाकारों को राजकलाकार के रूप में नियुक्त किया जाता था। बृहन्नला रूपधारी अर्जुन द्वारा विराट पुत्री उत्तरा को नृत्य की शिक्षा दिये जाने का भी उल्लेख प्राप्त होता है। गन्धर्व विद्या विशारद अर्जुन को गीत, वादय् एवं नृत्य का ज्ञाता बताया गया है।इसके अतिरिक्त महाभारत के प्रधान पात्र श्रीकृष्ण, नृत्य–संगीत के अधिष्ठाता माने जाते हैं। श्रीकृष्ण और गोपियों की रासक्रीडा भारत की लोक नाट्य–परम्परा का स्रोत मानी जाती है। महाभारत के हरिवंश पर्व में चित्रलेखा, उर्वशी,हेमा,रम्भा,मेनका,मिश्रकेशी एवं तिलोत्तमा आदि सुन्दर अप्सराओं द्वारा नृत्य एवं वाद्य–यंत्रों के प्रयोग की सूचना मिलती है। महाभारत के वनपर्व में प्रद्युम्न विवाह के अवसर पर रामायण एवं कौवेररम्भिसार नामक नाटक के अभिनीत होने का उल्लेख मिलता है जिसमें नट,नर्तक ,गायक,सूत्रधार आदि पात्रों के उल्लेख के साथ ही उनके बारे में विस्तृत जानकारी दी गई है।विभिन्न उत्सवों पर नृत्य के आयोजन का उल्लेख प्राप्त होता है। (महाभारत वनपर्व / 15 / 13)

नाट्यशास्त्र में नृत्य :

भरत के नाट्य शास्त्र के समय तक भारतीय समाज में कई प्रकार की कलाओं का पूर्णरूपेण विकास हो चुका था। जन साधारण की रुचि कलाओं में इतनी अधिक बढ़ गई थी कि तत्कालीन प्रशासनों में यदा 'कदा यह भय व्याप्त हो जाता था कि लोग कही अपने कार्य छोड़ मात्र कलाओं तथा आमोद प्रमोद में ही न वक्त गुजारने लगे, सो इन पर कभी–कभी प्रतिबंध भी लग जाता था। भरत मुनि ने नाट्य कला को अपना लक्ष्य बनाकर उसी के विकास के लिये नाट्यशास्त्र की अत्यंत उपयोगी और पूर्णतः व्यवहारिक विवेचनात्मक रचना की, जो कि आज इतने समय बाद भी नाट्य नृत्य कला के लिये उतना ही उपयोगी ग्रंथ है जितना कि तब रहा होगा।यह सारे शास्त्रीय नृत्यों की रीढ़ है। नाट्यशास्त्र को ही इस कला का प्रथम उपलब्ध ग्रंथ मान गया हैं। यह महा ग्रंथ न केवल नाट्य कला अपितु नृत्य संगीत अलंकार–शास्त्र छंद–शास्त्र आदि अनेक विषयों का आदिम ग्रंथ है , इसे पंचमवेद कह कर भी सम्मानित किया गया है। भरत मुनि का नृत्य जगत में यह योगदान बहुमूल्य है। इसके बाद के संस्कृत के प्राचीन ग्रंथों

जैसे –कालिदास के शाकुंतलम ,मेघदूतम ,वात्सायन के कामसूत्र तथा मृच्छकटिकम् आदि ग्रंथों में इन नृत्य का विवरण हमारी भारतीय संस्कृति की कलाप्रियता को दर्शाता है, जो कि आज भी अक्षुण्ण है।

उपर्युक्त साक्ष्यों के विवरणों के माध्यम से समाज में नृत्य के अस्तित्व का बोध होता है। साथ ही यह भी ज्ञात होता है कि जिस प्रकार वर्तमान में व्यक्ति अपनी खुशियों को व्यक्त करने के लिए नृत्य को माध्यम बनाता है, उसी प्रकार प्राचीन काल में भी नृत्य समाज का एक अभिन्न अंग था।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :

1– शुक्ल संहिता 30/19

2– वही, 30/6

3– अथर्ववेद, भूमिसूक्त,12/1/41

4– प्राचीन हिन्दू नृत्य संगीत , द्विवेदी, पृष्ठ 9

5– भारतीय नाट्यपरम्परा और अभिनयदर्पण पृष्ठ सं.122

6– भारतीय नाट्यपरम्परा और अभिनयदर्पण,वाचस्पति गैरोला, पृष्ठ सं.125

7– कथक के प्राचीन नृत्तांग ,रीता रघुवीर, पृष्ठ सं.4

8– भारतीय नाट्यपरम्परा और अभिनयदर्पण, वाचस्पति गैरोला पृष्ठ सं.125

9– लक्ष्मी नारायण गर्ग, कथक नृत्य, पृष्ठ 12

❖❖